International Journal of Applied Research 2015; 1(4): 328-329

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 3.4
IJAR 2015; 1(4): 328-329
www.allresearchjournal.com
Received: 17-02-2015
Accepted: 18-03-2015

धर्मेन्द्र कुमार
शोधार्थी, संस्कृत–विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

Correspondence:
धर्मेन्द्र कुमार
शोधार्थी, संस्कृत–विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सोमयाग में वृष्टि विज्ञान

धर्मेन्द्र कुमार

इस शोध–निबन्ध में सोमयाग की प्रक्रिया के द्वारा जिस प्रकार वृष्टिविज्ञान की व्याख्या की गयी है, उसका यहाँ पर विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है–

सर्वप्रथम अग्निष्टोम नामक साङ्गोपाङ्ग सोमयाग छः दिन में पूरा किया जाता है। प्रथम दिन में दीक्षणीयेष्टि के द्वारा यजमान तथा उसकी पत्नी का दीक्षारूप प्रधान कर्म सम्पन्न होता है। आगे के तीन दिनों में उपसद इष्टियाँ और प्रवर्ग्य किया जाता है। पांचवें दिन सोम कर अभिषव करके प्रातः सवन, माध्यन्दिन सवन एवं तृतीय सवन द्वारा तीन बार में सोमयाग किया जाता है। छठे दिन उपसंहार के रूप में अवभृथ नामक कर्म निष्पन्न होता है। इस याग में तीनों पशुओं का आलम्भन किया जाता है। सुत्यादिन से प्रथम दिन अग्निषोमीय, सुत्या के दिन सवनीय और छठे दिन' मैत्रावारूणी वशा अनुबन्ध्या गौ का आलम्भन किया जाता है।

यहाँ यह विवेचनीय होना चाहिए कि इस ब्रह्माण्ड में रात–दिन जो यज्ञ हो रहे हैं, उनमें कुछ पृथिवीस्थानीय है, कुछ अन्तरिक्षस्थानीय हैं और कुछ द्युस्थानीय हैं, वेदिरूपापृथिवी भी त्रिस्थानीय है। जिस अग्नि में हवन किया जाता है, वह अग्नि भी त्रिस्थानीय है। पृथिवी के त्रिस्थानीयत्व का वर्णन ऋग्वेद की इस ऋचा[1] में किया गया है– ''यदिन्द्राग्नी परमस्थां पृथिव्यां मध्यमस्यामवमस्यामुत स्थः''। वैदिक निघण्टु में भी 'पृथिवी' पद त्रिास्थानीय देवताओं में तीन बार पढ़ा गया है। अग्निहोत्र, दर्शपूर्णमास और चातुर्मास्यों की वेदि इस लोक की प्रतिरूपक है। सोमयागों की वेदि अन्तरिक्ष की प्रतिरूपक है, तथा अग्निचमनों की वेदि द्युलोक की प्रतिरूपक है। जिस प्रकार इन तीनों लोकों के परिमाण में भेद है, उसी प्रकार इन यागों की जो वेदियां बनाई जाती हैं उनके परिमाण में भी भेद रखा जाता है। इस प्रकार अग्निष्टोम इत्यादि सोमयागों की जो महावेदि अथवा उत्तरवेदि बनाई जाती है, वह प्राकृतिक–वेदि की अपेक्षा बड़ी होती है तथा प्राकृत वेदि से अलग बनाई जाती है। यद्यपि आधिदैविक सोमयाग में अन्तरिक्ष रूपा एक ही वेदि है फिर भी यहाँ लौकिक सोमयाग में सुविधा के लिए सदोमण्डप, हविर्धानमण्डप तथा उत्तरवेदि बनाकर तीन भाग करके कार्य सम्पन्न किया जाता है।

इस सोमयाग में प्रवर्ग्य संज्ञक कर्म, अरूणा एकहायनी गौ से सोम का खरीदना, हविर्धानमण्डप में दो हविर्धान–नामक गाड़ियों की स्थापना, सोम का अभिषव, जैसे भूमि पर उपरव खोदना, उसके ऊपर दो अभिषवफलक (काष्ठनिर्मित फलक रखना) उसके ऊपर मृगचर्म रखकर शिला रखना, उसके ऊपर सोम के टुकड़ों को रखकर पत्थर से कूटना, प्रातः सवन–माध्यन्दिन सवन–तृतीय सवन में क्रमशः सोम का परिमाण उत्तरोत्तर घटते जाना इत्यादि कार्य विशेषरूप से विवेचनार्थ हैं।

पूर्वोक्त तीन पशु भी यहाँ महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आधिदैविक पक्ष में ये तीन 'पशु' कौन हैं, ऐसी जिज्ञासा होने पर– ''अग्निः पशुरासीत् तेनायजन्त, वायुः पशुरासीत् तेनायजन्त, सूर्यः पशु रासीत् तेनायजन्त''[2] यह याजुष मन्त्र तीनों लोकों में स्थित क्रमशः अग्नि, वायु और सूर्य पशुओं का निर्देश करता है। इसी रहस्य की पुष्टि निरूक्त[2] में उद्धृत 'अग्निः पशुरासीत् तमालभन्त तेनायजन्त' ब्राह्मण वचन से होती है। सोमयाग अन्तरिक्षस्थानीय है ऐसा पूर्व में कह दिया है इस लिए सोमयाग में निर्दिष्ट तीनों पशु भी मध्यमस्थानीय ही है। मध्यमस्थानीय वायु ही अवस्था भेद से तीन प्रकार से विभक्त हुआ तीनों पशुओं के रूप में निर्दिष्ट किया जाता है।

ऊपर उल्लिखित विशिष्ट कर्मों का यहाँ विवेचन करते हैं–

प्रवर्ग्य– प्रवर्ग्य नामक कर्म में मिट्टी से बने हुए महावीर नामक पात्र में घृत रखकर तपाया जाता है। इस विधि को करते समय यज्ञशाला के द्वारा बन्द कर दिये जाते है। एक बाहु बराबर लम्बे काष्ठों में मृगचर्म बांधकर उनसे पंखे के समान प्रत्येक मन्त्र पर वायु को ऊपर प्रेरित किया जाता है। तपे हुए घी में गाय और बकरी का दूध डाला जाता है। ऐसा करने से जो लपटें उत्पन्न होती हैं उनसे अत्यन्त ताप उत्पन्न होता है। इस कर्म से वृष्टि में सहायक ग्रीष्म ऋतु में महान ताप से भूमि पर स्थित जल उष्ण होकर वाष्प बन जाता है और अन्तरिक्ष में चला जाता है।

सोमक्रयः–

एकहायनी अरूणा गौ से सोम खरीदा जाता है। यहाँ जो अरूणा एकहायनी गौ है, वह एक हायन (वर्ष) पश्चात् वर्षा ऋतु में प्रकट होने वाली गौ अर्थात् शब्दात्मिका विद्युत् है। विद्युत का गोत्व तथा शब्द कर्म का वर्णन ''अयं स शिघ्क्ते येन गौरी भीवृता मिमाति मायुं ध्वसनाधिश्रिता''[3] इस मन्त्रा में स्पष्टतया किया गया है। सोम सोमयाग की हवि है। सोम अन्तरिक्षस्थानीय देव है, और वह वाष्प बने हुए जलों का समूहरूप है। हविः पद भी निघण्टु में मेघ के नामों के पाठ के पश्चात् जल नामों के अन्तर्गत पढ़ा गया है। सोम रूप हवि अर्थात् जल, मेघरूप वृत्र के द्वारा अवरूद्ध होने से विद्युद्रप वज्र के प्रहार से अविभावन को प्राप्त हो जाता है। अर्थात् तरल होकर भूमि पर गिर जाता है।

जैसा कि पर्जन्य–सूक्त[4] में ''अर्वाड्तेन स्तनायित्नुने ह्यपो निषिंचन'' यह मन्त्र है। वर्षा कराने में अरूणा विद्युत् ही कारण बनती है। अन्य वर्णवाली विद्युत् तो उत्पातों को उत्पन्न करती है। जैसा कि कहा भी गया है–

वाताय कपिला विद्युदातपायातिलोहिनी।
कृष्णा सर्वविनाशायदुर्भिक्षाय सिता भवेत्।।

अर्थात् वात (आंधी तूफान) के लिए कपिला वर्ण वाली विद्युत् आतप (गर्मी) के लिए अतिलोहिनी, सर्वविनाश के लिए कृष्णा तथा दुर्भिक्ष' के लिए सिता वर्ण वाली विद्युत् होती है।

अग्निषोमीय पशु :–

इस पशु का सुत्या दिन से पूर्व दिन आलभन किया जाता है। अग्नि और सोम देवता वाला अर्थात् दोनों के धर्म से युक्त, वर्षा ऋतु के आदि में दक्षिण पश्चिम दिशा से चलने वाला आर्द्रवायु (मानसून) ही अग्निषोमीय पशु है। उसकी प्राप्ति ही आलभन है।

हविर्धान मण्डपः–

जहाँ हवि रखी जाती है, स्थापित की जाती है उसे हविर्धान कहते हैं। तथा जहाँ उसका अभिषवन किया जाता है उसे हविर्धानमण्डप कहते हैं। यह हविर्धानमण्डप इस आधिदैविक जगत् में अन्तरिक्ष का वह स्थान है, जहाँ वाष्प रूप में परवर्त्तित जल ठहरते हैं।

दो हविर्धान शकटः–

जिन दो शकटों (गाडियों) के ऊपर सोमरूप हवि रखी जाती है, वे शकट भी हविर्धान नाम से ही कहे जाते हैं। सोमरूप हवि अन्तरिक्षस्थानीय जल ही है। यह हविरूप जल वाष्प बनकर मेघों में रहता है, इसलिए आधिदैविक जगत् में मेघ ही हविर्धान शकट हैं। मेघों में परस्पर संघर्षण से ही उनमें विद्युत् की उत्पत्ति होती है। संघर्षण परस्पर दो मेघों अथवा मेघावयवों में ही होता है, इसलिए सोमयाग में हविर्धानमण्डप में दक्षिण और उत्तर दो विपरीत दिशाओं में दो हविर्धान शकट रखे जाते हैं। मेघों का घर्षण बिना गति के संभव नहीं है, अतः सोमयाग में भी गति में समर्थ शकट ही हविर्यान के रूप में रखे जाते हैं।

सोम का अभिषव :–

सोम के अभिषव के लिए सोमलता के टुकड़ों को पत्थरों से कूटा जाता है। अभिषव करते समय एक पत्थर हविर्धानशकट् के नीचे रखा जाता है और दूसरे को हाथ में लेकर उससे कूटते हैं। निघण्टु में ग्रावा (पत्थर) शब्द मेघ के नामों में पढ़ा गया है। इसलिए यहाँ के ग्रावा अधिदैविक यज्ञ में अन्तरिक्ष के मेघ हैं। सोम के अभिषव में ग्रावाओं से कूटते समय शब्द उत्पन्न होता है। अन्तरिक्ष में स्थित ग्रावा रूपी मेघों संघर्षण में भी इतना भयंकर शब्द उत्पन्न होता है कि जिससे सभी प्राणी आत्मरक्षा के लिए इतस्ततः भागते हैं। जैसा कि पर्जन्य सूक्त[5] में मन्त्र द्वारा कहा गया है– ''विश्वं विभाय भुवनं महा– वधात्''। अर्थात् जिस प्रकार सोमलता का रस ग्रावाओं से कूटते समय निकलता है, वैसे ही मेघों के परस्पर संघर्षण से उत्पन्न विद्युत् के प्रहार से मेघों में रूका हुआ जल द्रवीभूत होकर पृथिवी पर गिरता है।

ऐसे ही अधिषवणफलक का स्थापन में, उपरवों के खनन में, प्रत्येक सवन में सोम का परिमाण भेद में और सवनीय पशु में भी सोमयाग में विहित वृष्टि विधान के तथ्य दृष्टिगोचर होते है। 'अनूबन्ध्या वशा गौ' में तो छठे दिन वशा गौ का आलम्भन किया जाता है। वह यज्ञ के अनु=पश्चात् बाँधी जाती है, अतः उसका नाम अनूबन्ध्या है। यह गौ वशा अर्थात् बन्ध्या (जो प्रसव नहीं करती) होती है। आधिदैविक सोमयाग में भी वर्षा ऋतु के पश्चात् ग्रीष्म ऋतु के अन्तिम चरण में बहुत थोड़े जल वाले मेघों में जो विद्युत रूपी गौ शब्द करती है, वह केवल शब्दमात्र से ही जानी जाती है, सुनी जाती है, जल नहीं बरसाती है, अर्थात् प्रसव नहीं करती है।

इस प्रकार इस शोध–निबन्ध में ब्राह्मणादि वैदिक वाड्मय में जो अधियज्ञ अधिदैवत–अध्यात्म की स्थान–स्थान पर समानता दर्शाई गयी है, उसके अनुसार द्रव्यमय सोमयाग द्वारा जो वार्षिक वृष्टि विज्ञान विवेचित होता है उसका यहाँ यथा सामर्थ्य निदर्शन किया गया है। शेष इस विषय में वेदविज्ञान–शिरोमणि एवं वेदविज्ञानपारड्गत विद्वज्जन ही प्रमाणार्ह हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1. ऋग्वेद–1/108/10
2. माध्यन्दिन–23/17
3. ऋग्वेद– 1/164/29
4. वही–5/83/6
5. वही– 5/83/2
6. श्रौतयज्ञ मीमांसा–पृ. 245
7. मीमांसा शाबर भाष्यम्–पृ. 136